

राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ के लिए

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 1430/2012

1. पीर मोहम्मद का अब निधन हो चुका है और उनका प्रतिनिधित्व निम्नलिखित कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा किया जा रहा है:

1/1. अमीना पत्नी पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 74 वर्ष

1/2. अब्दुस सलाम पुत्र पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 45 वर्ष

1/3. अब्दुल मन्नान पुत्र पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 42 वर्ष

1/4. अब्दुल सुभान पुत्र पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 39 वर्ष

1/5. अब्दुल रहमान पुत्र पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 32 वर्ष

आशियाना फ्लैट्स, पीटी कॉलेज रोड, पालड़ी अहमदाबाद के सभी निवासी

1/6. अब्दुलकयूम पुत्र पीर मोहम्मद, उम्र लगभग 47 वर्ष, निवासी 503, फैजान अपार्टमेंट, फैज मोहम्मद सोसाइटी, नारायण नगर रोड, पालड़ी अहमदाबाद।

1/7. नसीम पुत्री पीर मोहम्मद पत्नी सलामुद्दीन रंगरेज़, उम्र लगभग 36 वर्ष, निवासी ग्राम व पोस्ट दुगारी, तहसील नैनवा, जिला बूंदी, राजस्थान।

2. इंदु खां पुत्र सुल्तान खां, निवासी चांदमा कलां गिरदावर सर्किल, माधोराजपुरा, तहसील फागी, जिला जयपुर

3. सफी मोहम्मद पुत्र सुल्तान खान, निवासी चांदमा कलां गिरदावर सर्किल, माधोराजपुरा, तहसील फागी, जिला -जयपुर

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, तहसीलदार के माध्यम से फागी, जिला जयपुर
2. राजस्व मंडल, अजमेर अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से
3. राजस्व अपीलीय प्राधिकारी, कलेक्ट्रेट, जयपुर

4. अतिरिक्त कलेक्टर द्वितीय-जयपुर।

-----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता (ओं) के लिए : श्री अजीत भंडारी-वरिष्ठ अधिवक्ता
श्री वैभव भार्गव
प्रतिवादी (ओं) के लिए : श्री अक्षय शर्मा- एडिशनल जीसी।

माननीय श्रीमान. जस्टिस अनूप कुमार ढांड

आदेश

17/01/2024

प्रकाशनीय

1. याचिकाकर्ताओं द्वारा निम्नलिखित प्रार्थना के साथ यह रिट याचिका दायर की गई है:

"अतः यह प्रार्थना की जाती है कि उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश द्वारा:

(क) अपील/एलआर/1423/2006/जयपुर में राजस्व मण्डल द्वारा पारित दिनांक 11.10.2011 के आदेश निरस्त किये जायें।

(ख) राजस्व अपील प्राधिकारी, जयपुर द्वारा अपील संख्या 43/2001 में पारित आदेश दिनांक 28.12.2005, जहां तक वह खसरा संख्या 110/3301 क्षेत्रफल 7 बीघा 17 बिस्वा भूमि के आवंटन को निरस्त करने से संबंधित है, को अपास्त कर निरस्त किया जाए।

(ग) प्रकरण संख्या जस्टिस बेरी आयोग संख्या 14/04 आवेदन 26/94 में अतिरिक्त कलेक्टर (द्वितीय) जयपुर द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.01.2001 को निरस्त किया जाए।

माननीय न्यायाधीश द्वारा उचित समझे जाने वाले अन्य आदेश भी याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित किए जा सकते हैं।

2. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ताओं के पिता एक "भूमिहीन व्यक्ति" थे, इसलिए, राजस्थान भूमि राजस्व अधिनियम (कृषि प्रयोजनों के लिए भूमि का आवंटन) नियम, 1957 के तहत निहित प्रावधानों पर विचार करते हुए, खसरा नंबर 1098/2 माप, 7 बीघा और खसरा नंबर 110/3301 माप, 7 बीघा और 17 बिस्वा भूमि का आवंटन उनके पक्ष में क्रमशः वर्ष 1964 और 1961 में किया गया था। वकील ने प्रस्तुत किया कि 40 साल की अवधि बीत जाने के बाद, उपरोक्त आवंटन राज्य सरकार द्वारा गठित " बेरी आयोग" द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर अतिरिक्त कलेक्टर- II, जयपुर के न्यायालय द्वारा दिनांक 30.01.2001 के आदेश द्वारा रद्द कर दिए गए थे। वकील ने प्रस्तुत किया कि आयोग द्वारा याचिकाकर्ताओं को कोई नोटिस नहीं दिया गया था वकील ने दलील दी कि 30.01.2001 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ताओं ने राजस्व अपीलीय प्राधिकरण, जयपुर (संक्षेप में 'आरण') न्यायालय में अपील दायर की, जिसमें एक आदेश पारित किया गया और खसरा संख्या 1098/2, 7 बीघा भूमि के संबंध में दिनांक 12.06.1964 का आवंटन बहाल कर दिया गया तथा रद्द करने के शेष आदेश को दिनांक 28.12.2005 के आक्षेपित आदेश के अनुसार यथावत रखा गया। वकील ने दलील दी कि इस आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर याचिकाकर्ताओं ने राजस्थान भू-राजस्व अधिनियम, 1956 (संक्षेप में '1956 का अधिनियम') की धारा 76 के अंतर्गत राजस्व बोर्ड (संक्षेप में 'बोर्ड') के समक्ष अपील दायर की और बोर्ड ने एक कदम आगे बढ़कर स्वतः ही इसे स्वीकार कर लिया। मोटू ने दिनांक 11.10.2011 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में खसरा संख्या 1098/2, क्षेत्रफल 7 बिस्वा, के संबंध में किए गए आवंटन को रद्द कर दिया है ।

अधिवक्ता का तर्क है कि बोर्ड द्वारा पारित उपरोक्त आदेश प्रक्रिया के विरुद्ध है क्योंकि राज्य द्वारा आरएए द्वारा पारित दिनांक 28.12.2005 के निर्णय के विरुद्ध कोई अपील प्रस्तुत नहीं की गई थी। अधिवक्ता का यह भी तर्क है कि याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में किया गया आवंटन चार दशक से अधिक समय बीत जाने के बाद रद्द नहीं किया जा सकता। वकील ने आगे कहा कि एक बार याचिकाकर्ताओं को खातेदारी अधिकार मिल जाने के बाद उसे राजस्थान भूमि राजस्व (कृषि उद्देश्यों के लिए भूमि का आवंटन) नियम 1970 के नियम 44 के तहत कानून की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना रद्द नहीं किया जा सकता। वकील ने आगे कहा कि संबंधित भूमि का आवंटन 1956 के नियमों के अनुसार याचिकाकर्ताओं के पक्ष में किया गया था, इसलिए याचिकाकर्ताओं को भूमि का आवंटन राजस्थान भूमि राजस्व (कृषि उद्देश्यों के लिए भूमि का आवंटन), नियम 1957 (संक्षेप में, '1957 के नियम') के नियम 44 के तहत निहित शक्ति के तहत प्रतिवादियों द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पत राम एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य डीबी सिविल रिट याचिका संख्या 948/1986 के मामले में पारित निर्णय और आनंदी लाल बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, 1996 आरआरडी 170 में रिपोर्ट किया गया के मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा रखा है। वकील ने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक है।

3. इसके विपरीत, प्रतिवादियों के वकील ने याचिकाकर्ताओं के वकील द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि याचिकाकर्ताओं के पिता 1956 के नियम 2(3) के तहत परिभाषित "भूमिहीन व्यक्ति" नहीं थे और उनके पास 31 बीघा और 8 बिस्वा ज़मीन का कब्ज़ा था और आवंटन प्राप्त करते समय उन्होंने खुद को भूमिहीन व्यक्ति दिखाकर इस तथ्य को जानबूझकर छुपाया था। वकील ने कहा कि

विभिन्न व्यक्तियों द्वारा झूठे आवंटन के संबंध में कई धोखाधड़ी राज्य सरकार के ध्यान में लाई गई, इसलिए वर्ष 1995 में " बेरी आयोग" के नाम और शैली में एक आयोग का गठन किया गया, जिसने सभी आवंटियों को नोटिस जारी करने के बाद मामले की जांच की और उसके बाद, याचिकाकर्ताओं के पिता यानी सुल्तान खान सहित कई व्यक्तियों के पक्ष में जारी किए गए आवंटन को रद्द करने के लिए उक्त आयोग द्वारा सिफारिशें की गईं। वकील ने दलील दी कि उपरोक्त आयोग द्वारा की गई सिफारिशों पर विचार करते हुए, अतिरिक्त कलेक्टर, द्वितीय, जयपुर ने 1970 के नियम 44 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, आक्षेपित आदेश पारित किया, जिसके तहत याचिकाकर्ताओं के पिता की दोनों भूमि का आवंटन रद्द कर दिया गया। वकील ने दलील दी कि 1970 के नए नियमों द्वारा नियम 1956 को निरस्त कर दिया गया था। वकील ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, कलेक्टर 1970 के नियम 44 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए पूरी तरह सक्षम थे और उपरोक्त शक्ति का प्रयोग करके, अतिरिक्त कलेक्टर द्वारा 30.01.2001 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं के पिता को भूमि का आवंटन रद्द करना उचित था। वकील ने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने अपील दायर करके आरण के न्यायालय का दरवाजा खटखटाया लेकिन बिना किसी आधार के आरण ने याचिकाकर्ताओं के पिता की जमीन यानी 31 बीघा में खसरा नंबर 1098/2 वाली जमीन के संबंध में याचिकाकर्ता के काल्पनिक हिस्से का संदर्भ दिया है। वकील ने प्रस्तुत किया कि बिना किसी आधार के दो जमीनों के बीच अंतर किया गया था जो याचिकाकर्ताओं के पिता को आवंटित की गई थीं और बिना किसी आधार के खसरा नंबर 1098/2 वाली जमीन के संबंध में वर्ष 1964 में याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में किए गए आवंटन को बहाल कर दिया गया था। वकील ने प्रस्तुत किया कि आरण द्वारा की गई उपरोक्त गलती/त्रुटि को बोर्ड ने 11.10.2011 के फैसले को पारित

करते समय सुधारा था और याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में किए गए दोनों आवंटनों को रद्द करने का आदेश दिया था। वकील ने आगे कहा कि आनंदी लाल (सुप्रा) के मामले में याचिकाकर्ता के वकील द्वारा लिया गया निर्णय इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के संज्ञान में चिमन लाल बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य के मामले में एक संदर्भ में लाया गया था, जिसे एआईआर 2000 राजस्थान 206 में रिपोर्ट किया गया था। वकील ने कहा कि संबंधित प्रावधानों/नियमों और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को ध्यान में रखने के बाद, अंततः संदर्भ का उत्तर आनंदी लाल (सुप्रा) के मामले में खंडपीठ द्वारा तैयार की गई सादृश्यता के विरुद्ध दिया गया था। वकील ने कहा कि चिमन लाल (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की बड़ी पीठ ने एक स्पष्ट निष्कर्ष दर्ज किया है कि न्यायालय किसी भी सीमा की अवधि निर्धारित या तय नहीं कर सकता है और न्यायालय विधायिका की शक्तियों का प्रयोग नहीं कर सकता है। वकील ने कहा कि ऊपर दिए गए प्रस्तुतीकरण के मद्देनजर, इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

5. इस याचिका में शामिल विवाद पर निर्णय लेने से पहले, 1957 के नियम 2(3-बी) के तहत परिभाषित "भूमिहीन" शब्द की परिभाषा को उद्धृत करना लाभदायक होगा, जो इस प्रकार है:

“भूमिहीन कृषक’ से तात्पर्य राजस्थान के ऐसे निवासी से है जो या तो वास्तविक कृषक है या कृषि मजदूर है, तथा व्यक्तिगत रूप से भूमि पर खेती कर रहा है या खेती करने की संभावना रखता है, तथा जिसकी आजीविका का मुख्य स्रोत कृषि या कृषि से संबंधित कोई अन्य

व्यवसाय है, तथा ऐसे व्यक्ति के पास राजस्थान में कहीं भी कोई काश्तकारी भूमि नहीं है, या ऐसी भूमि का क्षेत्रफल, जो उसके पास है, जिसमें पूर्व में आवंटित कोई भूमि भी शामिल है, नियम 12 में निर्धारित क्षेत्रफल से कम है:

बशर्ते कि निम्नलिखित श्रेणियों के व्यक्तियों को भूमिहीन कृषक नहीं माना जाएगा, अर्थात्-

(क) सरकार या किसी वाणिज्यिक या औद्योगिक प्रतिष्ठान या प्रतिष्ठान का कर्मचारी, उसकी पत्नी और उस पर आश्रित बच्चे, किन्तु किसी अनियत या कार्य प्रभारित श्रमिक को इस प्रयोजन के लिए कर्मचारी नहीं माना जाएगा;

(ख) ऐसा व्यक्ति जिसने अपने द्वारा धारित या उसे आवंटित सम्पूर्ण भूमि या उसके किसी भाग को बेच दिया है या अन्यथा अन्तरित कर दिया है और इस प्रकार उसके पास ऊपर विनिर्दिष्ट न्यूनतम क्षेत्रफल से कम क्षेत्रफल रह गया है;]

(ग) कोई विवाहित व्यक्ति जिसकी पत्नी या पति, जैसा भी मामला हो, के पास भूमि है, जिसमें ऐसी कोई भूमि भी शामिल है जो उसे पहले संयुक्त रूप से या अलग-अलग आवंटित की गई है, जो नियम 12 में निर्धारित क्षेत्र से अधिक है;"

6. भूमिहीन शब्द की उपरोक्त परिभाषा के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि भूमिहीन का तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो अपने नाम पर या अपने संयुक्त परिवार के किसी सदस्य के नाम पर कोई भूमि नहीं रखता है या जो काश्तकारी अधिनियम की धारा 53 के तहत इस प्रयोजन के लिए निर्धारित न्यूनतम क्षेत्र से कम क्षेत्र रखता है।

7. अभिलेखों से पता चलता है कि विचाराधीन भूमि के आवंटन के समय, याचिकाकर्ता के पिता के पास 31 बीघा 8 बिस्वा भूमि का कब्जा था और जानबूझकर यह तथ्य आवंटन समिति के संज्ञान में नहीं लाया गया, जबकि विचाराधीन आवंटन सुल्तान खान (याचिकाकर्ताओं के पिता) के पक्ष में किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि कई व्यक्तियों द्वारा स्वयं को भूमिहीन बताते हुए अनेक धोखाधड़ी और गलतबयानी की गई थी, इसलिए उपरोक्त तथ्यों की सत्यता सुनिश्चित करने के लिए, सरकार द्वारा बेरी आयोग का गठन किया गया, जिसने इस मुद्दे पर जाँच की। तत्पश्चात, सभी संबंधित व्यक्तियों को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के पश्चात, अंततः न केवल याचिकाकर्ताओं के पिता के विरुद्ध, बल्कि अन्य के विरुद्ध भी उनके आवंटन निरस्त करने की अनुशंसा की गई और उन अनुशंसाओं के आधार पर, मामले को अतिरिक्त कलेक्टर, द्वितीय, जयपुर द्वारा 1970 के नियम 44 के अंतर्गत लिया गया और अंततः याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध आदेश पारित किया गया तथा खसरा संख्या 1098/2 और 110/3301 दोनों भूमियों का आवंटन निरस्त कर दिया गया।

8. उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने एक अपील प्रस्तुत की जिसे आरएए द्वारा आंशिक रूप से अनुमति दी गई और खसरा संख्या 1098/2 वाली भूमि के संबंध में आवंटन बहाल कर दिया गया और खसरा संख्या 1098/2 और 110/3301 वाली भूमि के संबंध में आवंटन रद्द कर दिया गया।

9. आरएए द्वारा पारित दिनांक 28.12.2005 के आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने बोर्ड के समक्ष एक असफल अपील प्रस्तुत की, जिसे दिनांक 11.10.2011 के निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया और याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में किए गए दोनों आवंटन रद्द कर दिए गए। अब इस न्यायालय के समक्ष मुद्दा

यह है कि क्या वर्ष 1961 और 1964 में याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में किए गए आवंटन को कलेक्टर द्वारा 1970 के नियम 44 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, सीमा अवधि के बाद और चार दशक बीत जाने के बाद रद्द किया जा सकता है? चिमन लाल (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने आनंदी लाल (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय पर विचार करने के बाद, सीमा के कानूनी प्रश्न पर विचार किया है और इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने पैरा 10, 11, 12, 14, 15 और 16 में यह निर्णय दिया है जो इस प्रकार है:-

“10. हालाँकि, हमारे समक्ष सुनवाई के समय, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री बेनीवाल ने आनंदी लाल के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय की खंडपीठ के फैसले पर दृढ़ता से भरोसा किया है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के अधिकांश फैसलों पर विचार किया गया है और विद्वान वकील श्री बेनीवाल द्वारा यह प्रस्तुत किया गया था कि जब अधिनियम या नियमों के प्रावधानों के तहत कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है, तो पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग उचित समय के भीतर किया जा सकता है जो एक वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस मामले में विद्वान कलेक्टर ने पट्टा देने के दस साल बाद उसे रद्द करने के लिए अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग इस आधार पर किया कि ग्राम पंचायत द्वारा याचिकाकर्ता के पक्ष में पट्टा देने में वैधानिक नियमों का उल्लंघन हुआ था। संक्षेप में, श्री बेनीवाल का तर्क यह था कि जब अधिनियम या नियमों के तहत कोई सीमा अवधि प्रदान नहीं की जाती है, तो ऐसे मामलों में पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग एक वर्ष के भीतर किया जाना चाहिए और उससे अधिक नहीं, दूसरे शब्दों में, एम. बेनीवाल चाहते हैं कि हम नियम के तहत पुनरीक्षण शक्तियों का

प्रयोग करने के लिए सीमा अवधि तय करें। अधिनियम या नियमों के तहत किसी सीमा अवधि के प्रावधान के अभाव में पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा धारा 272 के तहत कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती।

11. प्रतिवादी संख्या 1 और 2 के विद्वान वकील श्री बिश्रोई और प्रतिवादी संख्या 3 के श्री भंडारी ने दृढ़ता से कहा कि जहां विधायिका ने अपने विवेक से कोई अवधि निर्धारित न करना उचित समझा हो, वहां सीमा निर्धारित करना न्यायालय का कार्य नहीं है। अजायब सिंह मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीशों के व्यक्तिगत विचार को इस तरह से कानून की व्याख्या करने के लिए उन्हें अधिकृत करने के लिए नहीं बढ़ाया जा सकता है जो विधायिका द्वारा जानबूझकर कानून को छोड़ दिया गया हो। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि आनंदी लाल मामले (सुप्रा) में भी इस न्यायालय की खंडपीठ ने कभी भी ऐसा कानून नहीं बनाया है कि उचित अवधि का अर्थ एक वर्ष है और यदि शक्तियों का प्रयोग एक वर्ष के बाद किया जाता है तो शक्तियों का ऐसा प्रयोग गलत है। आनंदी लाल के मामले में भी खंडपीठ ने स्वयं स्पष्ट किया था कि यदि धोखाधड़ी का आरोप लगाया गया हो और सरकारी अधिकारियों और निजी पक्ष के बीच मिलीभगत के कारण जनहित को नुकसान पहुँचता हो, तो पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग एक वर्ष की अवधि के बाद भी किया जा सकता है। इस प्रकार, जब कोई सीमा निर्धारित नहीं है, तो पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग की अवधि के संबंध में कोई निश्चित नियम नहीं बनाया जा सकता।

12. पक्षों के परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार करने से पहले, हम आनंदी लाल मामले (ऊपर) के कुछ तथ्य बताना चाहेंगे। उस मामले में विवाद एक ज़मीन से संबंधित है जो मूल रूप से पुजारी लक्ष्मी के नाम पर थी। नारायण मंदिर, जिनकी मृत्यु 1951 में कहीं हुई थी और उक्त भूमि को कोटा के आयुक्त द्वारा पारित दिनांक 201-1955 के आदेश के अनुसार राज्य को पुनः प्राप्त करने और जब्त करने का आदेश दिया गया था। दूसरे शब्दों में, भूमि " मौफी " भूमि थी, क्योंकि लक्ष्मीनारायण मंदिर के पुजारी की मृत्यु के बाद, भूमि का दावा करने वाला कोई नहीं था। राजगद्दी के माध्यम से, इसे राज्य द्वारा पुनः प्राप्त करने का आदेश दिया गया था। 14 अक्टूबर, 1955 को राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955 लागू हुआ। इसके बाद, याचिकाकर्ता आनंदी लाल ने 19 मई, 1957 को उक्त अधिनियम के तहत एक वाद दायर किया, जिसमें यह घोषित करने के लिए कि उन्हें इस आधार पर भूमि का " खातेदार " घोषित किया जाए कि 14 अक्टूबर, 1955 को, जिस दिन अधिनियम लागू हुआ, वह संबंधित भूमि के कब्जे में थे। उनके वाद पर 12 अक्टूबर, 1957 को फैसला सुनाया गया। राजस्थान सरकार मुकदमे में पक्षकार थी और उक्त आदेश के खिलाफ कोई अपील दायर नहीं की गई थी। नतीजतन, राजस्व रिकॉर्ड में। म्यूटेशन प्रविष्टि संख्या 334 22-9-1958 को की गई थी और याचिकाकर्ता ने भूमि पर कब्जा जारी रखा और उसी के फलों का आनंद लिया। हालांकि, 27-12-1983 को तहसीलदार द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर, एडिशनल कलेक्टर, बारां ने 25 साल बाद राजस्थान काश्तकारी अधिनियम की धारा 232 और राजस्थान भूमि राजस्व अधिनियम, 1956 की धारा 82 के तहत

राजस्व बोर्ड को एक संदर्भ दिया और यह प्रार्थना की गई कि सहायक कलेक्टर, बाराँ द्वारा 12-10- 1957 को याचिकाकर्ता आनंद लाल के पक्ष में पारित डिक्री और म्यूटेशन प्रविष्टि संख्या 334 दिनांक 22-9- 1958 को रद्द कर दिया जाए। राजस्व बोर्ड ने अपने आदेश दिनांक 21-5- 1986 द्वारा संदर्भ को स्वीकार कर लिया सहायक कलेक्टर, बाराँ द्वारा दिनांक 12-10-1957 को आदेश पारित कर दिनांक 22-9-1958 को की गई नामांतरण प्रविष्टि संख्या 334 को निरस्त करने तथा पूर्व स्थिति बहाल करने का आदेश दिया गया तथा भूमि को " मंडी मौफी" के नाम दर्ज करने का आदेश दिया गया।

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों पर विचार करने के बाद आनंदी लाल मामले में खंडपीठ ने माना कि:-

"एक बार जब ऐसे काश्तकारों/खातेदारों के मामलों का निर्णय हो जाता है और उनके अधिकार समाप्त हो जाते हैं और उसके अनुसार वे भूमि के कब्जे में होते हैं। सामान्यतः अधिनियम, 1956 की धारा 82 और अधिनियम, 1955 की धारा 232 के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग, संशोधित किए जाने वाले आदेश की तारीख से एक वर्ष की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता है। एक बार जब काश्तकार/खातेदार काश्तकारी/खातेदारी अधिकार प्राप्त कर लेता है और भूमि पर उसका कब्जा बना रहता है, तो अनुचित विलंब के बाद उसके अधिकारों पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है। ऐसे काश्तकारों/खातेदारों को सभी प्रयोजनों के लिए उन काश्तकारों/खातेदारों के समान माना

जाना आवश्यक है, जिन्होंने भूमि पर काश्तकारी/खातेदारी अधिकार प्राप्त किए हैं। 1956 के अधिनियम की धारा 82 और/या 1956 के अधिनियम की धारा 232 के तहत अनुचित देरी के बाद पुनरीक्षण शक्तियों के प्रयोग की अनुमति देना, शक्ति के अनुचित और मनमाने प्रयोग पर न्यायालयों की मुहर लगाने के समान होगा। एक वर्ष की अवधि के भीतर भूमि का काश्तकार/खातेदार केवल भूमि के सुधार के लिए खर्च कर चुका होगा, वह इस आधार पर अपने जीवन के मामलों को व्यवस्थित कर चुका होगा कि वह भूमि पर काबिज है, उसने इस आधार पर कई लेन-देन किए होंगे और कई प्रतिबद्धताएं की होंगी। इसलिए, आमतौर पर 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत पुनरीक्षण शक्तियों का एक वर्ष की अवधि के बाद प्रयोग नहीं किया जा सकता है। यदि समय की उचित अवधि की इस आवश्यकता को उपरोक्त प्रावधानों में नहीं पढ़ा जाता है तो प्रावधान असंवैधानिक हो जाएंगे।

15. माननीय खंडपीठ के न्यायाधीशों के प्रति पूर्ण सम्मान के साथ, हम उनके इस दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं कि एक वर्ष की अवधि के भीतर भूमि का काश्तकार/खातेदार भूमि के सुधार के लिए धन खर्च कर सकता था और वह इस आधार पर अपने जीवन के कार्यों को व्यवस्थित कर सकता था कि वह भूमि पर काबिज है, उसने इस आधार पर कई लेन-देन किए होंगे और कई प्रतिबद्धताएं की होंगी। क्योंकि, यह खंडपीठ के माननीय न्यायाधीशों की ओर से मात्र अनुमान

के अलावा और कुछ नहीं था और मामलों का निर्णय कभी भी अनुमान और पूर्वधारणा के आधार पर नहीं किया जा सकता। हम आनंदी लाल के मामले (सुप्रा) में माननीय खंडपीठ के न्यायाधीशों द्वारा लिए गए इस दृष्टिकोण से भी सहमत नहीं हैं कि सामान्यतः 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग एक वर्ष की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता है। यदि उचित समयावधि की इस आवश्यकता को उपरोक्त प्रावधानों में नहीं पढ़ा जाता है, तो ये प्रावधान असंवैधानिक हो जाएंगे।

16. हमारे सुविचारित मत में, यह मानते हुए कि 1955 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग सामान्यतः एक वर्ष की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता, आनंदी लाल मामले (सुप्रा) में खंडपीठ के माननीय न्यायाधीशों ने अपने व्यक्तिगत विचारों को बढ़ा-चढ़ाकर कानून की इस तरह व्याख्या करने का अधिकार दिया जो विधान बनाने के समान है, जो न्यायालय का कार्य नहीं है। खंडपीठ के माननीय न्यायाधीशों का यह मत, अजायब सिंह मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के बाद के निर्णय द्वारा खारिज किया जाता है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि:-

"जहां विधानमंडल ने अपनी बुद्धिमत्ता से कोई अवधि निर्धारित न करना उचित समझा हो, वहां सीमा निर्धारित करना न्यायालय का कार्य नहीं है। न्यायालय निस्संदेह कानून की

व्याख्या करते हैं, कानून नहीं बनाते। न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीशों के व्यक्तिगत विचारों को इस प्रकार बढ़ा-चढ़ाकर पेश नहीं किया जा सकता कि उन्हें कानून की इस प्रकार व्याख्या करने का अधिकार दिया जाए, जो विधानमंडल द्वारा जानबूझकर छोड़े गए कानून के समान हो।"

10. चिमन लाल (सुप्रा) के मामले में संदर्भ का निर्णय करते समय, इस न्यायालय की पूर्ण पीठ ने पाया कि आनंदी लाल (सुप्रा) के मामले में खंडपीठ का निर्णय स्वयं में अवैध था और यह भी माना गया कि न्यायालय कोई सीमा निर्धारित या तय नहीं कर सकते क्योंकि ऐसा कार्य विधानमंडल के अधिकार क्षेत्र में है और न्यायपालिका द्वारा इसे अपने हाथ में नहीं लिया जा सकता।

11. चिमन लाल (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा प्रतिपादित उपरोक्त प्रस्ताव के मद्देनजर, यह सुरक्षित रूप से माना जाता है कि अपर कलेक्टर ने आवेदन पर विचार करने और बेरी आयोग की सिफारिशों के आधार पर याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में जारी पट्टों को अस्वीकार और निरस्त करने में कोई त्रुटि नहीं की है, जिससे यह संकेत मिलता है कि याचिकाकर्ता के पिता "भूमिहीन व्यक्ति" नहीं थे और आवंटन के समय उनके पास 31 बीघा 8 बिस्वा भूमि थी। अतः, इन परिस्थितियों में, न तो अपर कलेक्टर और न ही राजस्व बोर्ड ने आक्षेपित आदेश पारित करने में कोई त्रुटि की है।

12. याचिकाकर्ता अपने पिता के पक्ष में किए गए आवंटन के आधार पर संबंधित संपत्ति पर अपना अधिकार जता रहे हैं। यह आवंटन संपत्ति पर कोई अधिकार प्रदान नहीं करता है, क्योंकि अपर कलेक्टर ने इसे अवैध पाया था और "सेठी आयोग" की अनुशंसा के आधार पर इसे रद्द कर दिया था। अपर कलेक्टर द्वारा आवंटन रद्द

करना उचित ही है क्योंकि नियमों का उल्लंघन करते हुए याचिकाकर्ताओं के पिता के पक्ष में आवंटन किया गया था, जिसमें उन्हें "भूमिहीन व्यक्ति" माना गया था, जबकि आवंटन के समय उनके पास बीघा ज़मीन थी और वे भूमिहीन व्यक्ति नहीं थे। याचिकाकर्ताओं के पिता द्वारा की गई गलतबयानी के आधार पर उनके पक्ष में आवंटन किया गया था।

13. इस न्यायालय की खंडपीठ ने सोहन कंवर बनाम राजस्व मंडल एवं अन्य, 2002(1) **WLC** 415 मामले में यह निर्णय दिया है कि यदि आवंटन आदेश मिथ्यावर्णन द्वारा प्राप्त किया गया है और उसे कायम नहीं रखा जा सकता, तो वह कानून की दृष्टि में अनुचित है। यह भी निर्णय दिया गया है कि मिथ्यावर्णन या धोखाधड़ी से प्राप्त कोई भी चीज़ कभी भी संतुष्ट नहीं की जा सकती। पैरा 9 से 13 में यह निर्णय दिया गया है जो इस प्रकार है:

"9. ये पत राम के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश की विचारशील टिप्पणियां हैं, जिसका स्पष्ट अर्थ है कि जब भी गलत बयानी या धोखाधड़ी से आवंटन प्राप्त होता है, तो रद्दीकरण को उचित ठहराया जा सकता है। कलेक्टर द्वारा बनाया गया मामला गलत बयानी का मामला है। इसलिए, पत राम के मामले में विद्वान एकल न्यायाधीश की टिप्पणियां कलेक्टर द्वारा की गई कार्रवाई का समर्थन करती हैं। नियमों की प्रवर्तनीयता के बारे में विद्वान एकल न्यायाधीश की टिप्पणियां नियमों की भाषा पर विचार करने के बाद की गई टिप्पणियां नहीं लगती हैं, जिसने कलेक्टर को आवंटन रद्द करने की शक्तियां प्रदान कीं और नियम कलेक्टर को नियमों के तहत किए गए आवंटन को रद्द

करने की शक्तियां देते हैं। 1970 के नियमों का नियम 14(4) इस प्रकार है:

(4) कलेक्टर को उप-विभागीय अधिकारी या तहसीलदार द्वारा नियमों के नियम 21 द्वारा निरसित नियमों के अधीन किए गए किसी आवंटन को या तो स्वप्रेरणा से या किसी व्यक्ति के आवेदन पर रद्द करने की शक्ति होगी, यदि आवंटन धोखाधड़ी या गलत बयानी के माध्यम से प्राप्त किया गया है या नियमों के विरुद्ध किया गया है या यदि आवंटी ने आवंटन की किसी भी शर्त का उल्लंघन किया है: बशर्ते कि किसी व्यक्ति के प्रतिकूल कोई भी ऐसा आदेश उस व्यक्ति को सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित नहीं किया जाएगा।

10. उल्लिखित शर्तों के आधार पर, नियमों के अंतर्गत किया गया कोई भी आवंटन, 1970 के नियमों के नियम 14(4) के अंतर्गत रद्द किया जा सकता है। इस मामले में, आवंटी को स्वामित्व प्रदान करने वाला मूल आदेश, मिथ्या कथन के कारण रद्द हो जाता है। खातेदारी अधिकार प्रदान करना केवल एक परिणामी आदेश है। मूल आदेश मिथ्या कथन द्वारा प्राप्त एक आदेश है, जिसके संबंध में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा विस्तृत चर्चा की गई है। हमारा मत है कि जब मूल आदेश रद्द हो जाता है, तो परिणामी आदेश भी रद्द होने चाहिए। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मिटू प्रकरण में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है। शाहनी बनाम भारत संघ (5), जिसमें निम्नानुसार टिप्पणी की गई है:

"जहाँ आवंटन आदेश को रद्द कर दिया जाता है, उस आदेश के जारी रहने के आधार पर प्राप्त स्वामित्व भी उसके साथ समाप्त हो जाता है। अधिनियम और नियमों के प्रासंगिक प्रावधानों में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो उस स्थिति के विरुद्ध हो जो सिद्धांत और तर्क के साथ सुसंगत है। यह स्पष्ट है कि एक सनद वैध आवंटन आदेश के आधार पर ही वैध रूप से जारी की जा सकती है। यदि आवंटन आदेश, जो अनुदान का आधार है, रद्द कर दिया जाता है, तो यह निष्कर्ष अवश्यभावी है कि अनुदान कायम नहीं रह सकता, क्योंकि उस अनुदान को वैध होने के लिए उसे एक वैध आदेश के तहत एक सक्षम अधिकारी द्वारा प्रभावी किया जाना चाहिए था।"

11. ऐसी स्थिति में, मिथ्या कथन द्वारा प्राप्त आवंटन आदेश, कानून की दृष्टि में अनुचित होने के कारण, अप्रभावी कहा जा सकता है। मिथ्या कथन के आधार पर प्राप्त आदेश के आधार पर कोई भी अनुवर्ती कार्रवाई भी कायम नहीं रखी जा सकती। धोखाधड़ी करने वाले व्यक्ति को अधिकार प्रदान करने के लिए बीता हुआ कोई भी समय पर्याप्त नहीं माना जा सकता।

12. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का एक अन्य तर्क, तेज सिंह बनाम राजस्थान राज्य (सुप्रा) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई कुछ टिप्पणियों से संबंधित है। तेज सिंह मामले (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की है:

"इस मामले में, पाए गए तथ्य यह हैं कि आवेदन और असाइनमेंट की तारीख, यानी 18.11.1968 को, अपीलकर्ता एक ग्राम सेवक, एक सरकारी कर्मचारी था। हालांकि वह एक निवासी था, उसकी आय का मुख्य स्रोत ग्राम सेवक के रूप में सेवा से था और इसलिए उसे एक वास्तविक कृषक भी नहीं कहा जा सकता है। यह सभी अधिकारियों द्वारा दर्ज किए गए तथ्य का निष्कर्ष है। इन परिस्थितियों में, यह भौतिक तथ्य को दबाने और 5 बीघा भूमि के असाइनमेंट का आदेश प्राप्त करने के बराबर होगा। इसलिए, आदेश को रद्द करना अवैध नहीं कहा जा सकता है। कलेक्टर द्वारा प्रयोग की गई शक्ति को अधिकार क्षेत्र के बिना नहीं कहा जा सकता है।"

13. उपर्युक्त टिप्पणियों के द्वारा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भूमि आवंटन रद्द करने के कलेक्टर के फैसले को बरकरार रखा है। हालांकि, उस मामले के विशेष तथ्यों के मद्देनजर, माननीय सर्वोच्च न्यायालय का मानना था कि आवंटी 1968 में एक अस्थायी ग्राम सेवक था और स्वाभाविक रूप से 1973 में उसने पद से इस्तीफा दे दिया और एक कृषक के रूप में अपना पेशा अपना लिया और फिर 20 से अधिक वर्षों तक वह व्यक्तिगत रूप से भूमि पर खेती करता रहा और सुधार करता रहा और इस प्रकार, इस पृष्ठभूमि में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने रद्दीकरण के आदेश को बरकरार रखते हुए अधिकारियों को आदेश दिया कि वे आवंटी को भूमि से बेदखल न करें। इस प्रकार, मामले के तथ्य स्पष्ट रूप से बताते हैं कि जब भी कलेक्टर द्वारा गलत बयानी की पृष्ठभूमि में किसी भी शक्ति का प्रयोग किया जाता है, तो इसमें हस्तक्षेप

नहीं किया जा सकता है। वर्तमान मामले में तेज सिंह (सुप्रा) के मामले में की गई माननीय सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियां पूरी ताकत से लागू होती हैं और कलेक्टर की कार्रवाई तेज सिंह के मामले में की गई टिप्पणियों के आलोक में बरकरार रखी जा सकती है।

14. इस न्यायालय को याचिकाकर्ता के वकील की इस दलील में कोई दम नहीं लगता कि विचाराधीन पट्टे लंबे समय के बाद रद्द नहीं किए जा सकते। यह कानून का स्थापित प्रस्ताव है कि यदि कोई पट्टा छिपाकर या धोखाधड़ी से प्राप्त किया गया है, तो ऐसे आवंटन को रद्द करने के अधिकार में कोई बाधा नहीं आएगी। इस न्यायालय की खंडपीठ ने इसहाक खान बनाम राजस्थान राज्य मामले में, 2018(4) आरएलडब्ल्यू (राजस्थान) 3326 के पैरा 17 और 18 में यह दृष्टिकोण अपनाया है। और यह माना गया है कि:

"17. विद्वान वकील के इस तर्क पर आते हुए कि लगभग दस वर्षों की अस्पष्ट देरी के बाद जारी किए गए पट्टे को चुनौती देने के लिए दायर याचिका को केवल इसी आधार पर खारिज कर दिया जाना चाहिए था, यह कहना पर्याप्त है कि धोखाधड़ी करके किसी भी वैध अधिकार के बिना प्राप्त स्थानीय प्राधिकरण या सरकार से संबंधित भूमि का आवंटन शून्य है और इस तरह के आवंटन को रद्द करने के लिए सक्षम प्राधिकारी के रास्ते में कोई सीमा नहीं आनी चाहिए।

18. अंत में, ग्राम पंचायत द्वारा जारी किए गए पट्टे के पंजीकरण के संबंध में, यह कहना पर्याप्त है कि दस्तावेज का पंजीकरण अपने आप में संपत्ति पर कोई अधिकार प्रदान नहीं करता है और इस प्रकार, यदि वह पट्टा जिसके आधार पर अपीलकर्ता विवादित भूमि पर अधिकार

का दावा कर रहा था, अवैध और शून्य पाया जाता है, तो राज्य सरकार अधिनियम की धारा 97 के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग करते हुए, ग्राम पंचायत के निर्णय को रद्द करने में अपने अधिकार क्षेत्र में थी, जिसके अनुसरण में अपीलकर्ता विवादित संपत्ति पर अधिकार का दावा कर रहा था।

15. उपर्युक्त चर्चाओं के मद्देनजर, इस न्यायालय को अपर कलेक्टर और राजस्व परिषद द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं दिखता। इस याचिका में कोई दम नहीं है और इसे एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।
16. स्थगन आवेदन और लंबित आवेदन, यदि कोई हो, भी खारिज समझे जाएंगे।
17. पार्टियों को अपना खर्च स्वयं वहन करने की स्वतंत्रता है।

(अनूप कुमार ढांड),जे

आशु /103

अस्वीकरण: इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी

